International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 14 Issue 07 July- 2024
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

कबीरदास के निर्गुण विचारधारा

प्रतिभा वी[1] , डॉ. महेश राम आर्य (प्रोफेसर)[2]
हिन्दी विभाग
[1,2] सनराइज यूनिवर्सिटी , अलवर, राजस्थान

शोध सारांश :-

भारतीय धर्म साधना के इतिहास में कबीरदास जी एक ऐसे विचारक एवं प्रतिभाशाली कवि हैं, जिन्होंने दीर्ध काल तक भारतीय जनता का पथ प्रदर्शन किया | निर्गुण माने सत्व, रजस् और तमस् आदि गुणों से मुक्त इन तीन गुणों से ही अहंकार, बुद्धि, शरीर, जन्म-मरण आदि विकृतियों का विकास होता है I परमात्मा इन गुणों से परे, निर्गुण-निराकार हैं | निर्गुण संतों ने राम को सगुण न मानकर लौकिक गुणों से रहित निर्गुण माना | निर्गुण मत का उपदेश है कि हृदय में स्थित भगवान को न देखकर बाहर मंदिर में जाकर देवी-देवताओं की पूजा करना ठीक नहीं है I इन्होंने मूर्तिपूजा का भी विरोध किया है| निर्गुण-संप्रदाय के अनुसार अपनी जीविका के लिए भिक्षा लेना ईश्वरानुभूति में विघ्न लाता है | किसी से कुछ मांगना कबीर ने मृत्यु के समान दुखदायी बताया है |

शब्द कुंजी :- कबीरदास, निर्गुण, विचारधारा इत्यादि|

पृष्ठभूमि :-

संत कबीर के काव्य का जितना ऐतिहासिक महत्व है, उतना ही उसका समसामयिक प्रयोजन है। भक्ति काव्य की सुदीर्घ परम्परा में कबीर जैसी प्रासंगिकता और किसी कवि की नहीं है। उन्होंने परम्परा से बहुत कुछ ग्रहण किया है, साथ ही चिंतन के कई नए आयाम भी विकसित किए हैं। वे ऐसे प्रथम साधक हैं जिन्होंने 'कागद की लेखी' (शास्त्र) के साथ 'आँखिन की देखी' (लोक अनुभव) को महत्व दिया था। कबीर ने निर्गुणतत्व का चिंतन करते हुए उसे वेदांत और एकेश्वरवादी दर्शन के साथ-साथ लोक जीवन से भी जोड़ा। उसे आत्मा-परमात्मा, ब्रह्म जीव, जगत, माया के बजाय दूल्हा-दुल्हिन के रूपक द्वारा प्रस्तुत किया ताकि जनसाधारण उसे हृदयंगम कर सके, यही कारण है कि कबीर का निर्गुण मत अन्यान्य कवियों से पर्याप्त भिन्न और विशिष्ट है। कबीर की साधना उभयपक्षीय है। एक ओर वे राम को पूर्णतः निर्गुण, सहज, अलख, निरंजन और निराकार मानते हैं और दूसरी उन्हें अपना पीउ और जननी कहते हैं -

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 14 Issue 07 July- 2024
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

i) हरि मोर पीव मैं राम की बहुरिया |

ii) हरि जननी मैं बालक तोरा ।

कबीर एक ओर यह मानते हैं कि मैं ही ब्रह्म हूँ। सम्पूर्ण विश्वप्रपंच मिट जाता है पर मेरा आत्म अमिट है.

हम न मरब मरिहँ संसारा ।[1]

वे कहते हैं कि वह पिंड भी हैं, ब्रह्मांड भी हैं और पिंड ब्रह्मांड से परे भी हैं। कबीर के = अनुसार निर्गुण-सगुण का यह द्वंद्व पंडितों ने खड़ा कर दिया है और यह बखेड़ा हमें दिग्भ्रमित कर देता है। कबीर के शब्दों में-

संतो धोखा कासूं कहिए।

गुन में निर्गुन, निर्गुन में गुन बॉट छाँड़ि क्या बहिए।[2]

कबीर यह मानते हैं कि ब्रह्म मात्र अनुभूति का विषय है, सर्वथा अभिव्यक्ति से परे है। किंतु लौकिक प्रयोजन से वह भक्ति से द्रवित होकर सगुण भी बन जाता है। वह सृष्टि रूप में अपना विस्तार कर लेता है और सबमें समा जाता है।

संत कबीर यह मानते हैं कि यह परमात्मा ही विश्वप्रपंच का सृष्टिकर्ता है इसलिए उसके अंतर्मन में कर्तृत्वशक्ति तथा लौकिक गुण वृत्ति का अनिवार्यतः समावेश हो जाता है। उसी प्रकार जैसे भ्रूण को धारण करके जननी एक रूप का सृजन करती है। दूसरी और कबीर यह भी मानते हैं कि यह ब्रह्म अनेक अंतर्विरोधी गुणों से युक्त है वह कुछ नहीं और सब कुछ है। वह बिना मुख के खाता है, बिना चरणों के चलता है और बिना जिहवा के गाता है -

बिनु मुख खाइ चरन बिनु चाले, बिन जिभ्या गुण गाये।

यह उल्लेखनीय है कि कबीर का यह सूत्र सीधे उपनिषदों से गृहीत है। वहाँ कहा गया था - 'तदेजति तन्नैजति, तदुरे तदन्तिके अर्थात् वह परमतत्व स्थिर भी है, गतिशील भी है, निकट भी है और अपरम्पार भी इसी उक्ति को आत्मसात करते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा था

बिनु पद चलै, सुनै बिन काना,

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 14 Issue 07 July- 2024
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

बिनु कर कर्म करे विधिनाना। आनन रहित सकल रस भोगी बिनु बानी बक्ती बढ़ जोगी ।।

वात्पर्य यह है कि औपनिषदिक दर्शन से लेकर भक्तिकाल तक ब्रह्म के इसी उभयात्मक स्वरूप का दर्शन-दिग्दर्शन किया जाता रहा है। अयोध्या, मथुरा, काशी आदि तीर्थों के मंदिर वर्ष पर्यंत विभिन्न पर्वोत्सवों से जुड़ गए। रासलीला रामलीला और शिवोपासना अत्यंत प्रचुरता और गहनता से होने लगी ताकि आम आदमी उनके रस में निमग्न हो जाए। अपना सर्वस्व इनके चरणों में अर्पित कर दे। इस प्रकार से मंदिर शक्ति केंद्र बन जाए और आराध्य देव के श्रीविग्रह टूटने से बच जाएँ। इससे सगुण भक्ति काव्य में अनेक प्रकार के अंधविश्वास भर गए। उपनिषद के स्थान पर पौराणिक कथाएँ जनमानस में छा गईं। पुरोहितों की बन आई और ये उपासना स्थल शोषण के निमित्त हो गए। इसकी प्रतिक्रिया में कई नए संत सम्प्रदाय उठ खड़े हुए और वहीं से निर्गुणसगुण का विवाद नए सिरे से गहरा गया।

कबीर का निर्गुण निरंजन ब्रह्म न शून्य था और न अनात्म। वह एक भावात्मक सत्ता थी। जिसे कबीर ने परमदयालु, भक्तवत्सल तथा करुणामय कहा है। वह बहुत परदुःखकातर है। निर्गुण होते हुए भी वह अनंत गुणों का सागर है। कबीर तो स्पष्ट कहते हैं- सात सर्वेद की मसि करो, लेखनि सब बनराइ औ धरती सब कागज करौं, तउ हरि गुन लिखा न जाय। आरम्भ में कबीर ने वैष्णव भक्तों के समान इन सगुण वाची सम्बोधनों का बहुत अधिक प्रयोग किया है-राम, हरि गोविंद मुकुंद मुरारी, विष्णु मधुसूदन गोवर्द्धनधारी शिवर आदि। यथासंदर्भ उन्होंने रामकथा और कृष्णकथा के भी कई प्रसंग उठाए हैं। जैसे

मुनि वसिष्ठ से पंडित ग्यानी, सोधि के लगन घरी।

सीता हरन, मरन दसरथ कौ, बन में विपति परी ।।

तथा कबीर के निर्गुण राम सर्वथा अव्यक्त और इंद्रियातीत हैं। वे कहते हैं –

निर्गुन राम जपहु ऐ भाई,

अविगत की गति लखी न जाई।

यही बात प्रकारांतर से सूरदास ने भी कही है-

रूप रेख गुन जाति जुगुति बिन, निरालम्ब मन चकृत धावै।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 14 Issue 07 July- 2024
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि कबीर की यह निर्गुणसगुण मीमांसा परम्परा से काफी हट कर है। हमारे यहाँ निर्गुण की जो मीमांसा उपनिषदों में की गई है, जो बौद्ध-जैन-श्रमण संस्कृति में पाई जाती है, जो योगवाशिष्ट्य में निर्दिष्ट की गई है, जो सूफ़ियों की साध्य रही है और जो नाथों सिद्धों द्वारा व्यावहारिक स्तर पर व्याख्यायित की गई है, कबीर की विवेचना शत-प्रतिशत उनसे अनुगत होकर नहीं चलती है। सम्भवतः इसीलिए कि उन पर जितना गोरखनाथ का प्रभाव रहा है, उतना ही रामानंद का भी। वस्तुतः इस द्विविधा का मुख्य कारण है- कबीर का मस्तमौलापन। वे मानते हैं कि परमात्मा का वर्णन किसी निश्चित मानदंड पर नहीं हो सकता। विश्व का अनुपमेय और अव्याख्येय तत्व है राम। जो निर्गुण- सगुणातीत है, वही बाहर-भीतर सर्वत्र विद्यमान है। वह केवल अनुभूतिगम्य है, स्वयं प्रकाश्य है, कथनीय तो कदापि नहीं। कबीर स्पष्ट कहते हैं -

जहाँ बोल तहाँ आखर आवा। जहँ अबोल तहँ मनन रहावा ।।

अर्थात उसके तत्व को जब कोई समझ नहीं सकता, तब लोग अपनी-अपनी सीमाओं में उसकी विवेचना करने लगते हैं। जैसे -

जस तूं तस तोहिं कोई न जाना। लोग कह सब आनहि आना।।

इसलिए कबीर ने अपने राम पर ही यह दायित्व डाल दिया है कि वे ही तत्वबोध का सही प्रबोध भक्तों को दें। इस प्रकार स्पष्ट है कि संत कबीर ने निर्गुण सिद्धांत को उमयदृष्टि से देखने की पहल की है। अस्तु उनके निर्गुण मत पर संतुलित दृष्टि से पुनर्विचार करने की आवश्यकता है।

प्रेमाभक्ति

स्थूल दृष्टि से देखने पर कबीर निर्गुण ब्रह्म के उपासक लगते हैं किंतु गहन स्तर पर वे सगुण ब्रह्म से भी जुड़े हुए हैं। मूलतः वे प्रेमाभक्ति के समर्थक रहे हैं। इसलिए विरहिणी के रूप में स्वयं को प्रस्तुत करते हुए कबीर ने अपने प्रियतम परमात्मा के प्रति जो परम विरहासक्ति प्रदर्शित की है वह सगुण भक्ति की मधुरोपासना से नितांत पृथक नहीं। शायद इसीलिए कबीर ने कहा था-

निरगुन सरगुन से परे, तहाँ हमारो ध्यान।

सच्ची भक्ति में विरोध का नहीं, अभेद का भाव रहता है। कबीर की घोषणा है कि-

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 14 Issue 07 July- 2024
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

जब ते आतम तत्व विचारा |[3]

भा निखर तबर्हि सबहिन तैं, काम क्रोध द्वारा अर्थात सारा बुद्धि-भेद मिट गया है और सहज बुद्धि जाग्रत हो गई है। कबीर अपने दिव्य- अलौकिक प्रेम को अनिर्वचनीय कहते हैं-

अकथ कहानी प्रेम की कछू कही न जाइ।

गूंगे केरी सरकरा, कबीर के प्रेम में एक निष्ठता और अनन्यता है। प्रिय नेत्रों में इस प्रकार रमा हुआ है कि उसमें काजल रेख के लिए भी स्थान नहीं है -

गूँगेरी बैठे मुसकाइ

कबीर काजर रेख हूँ अब तो दई न जाइ

नैननि प्रीतम रमि रहा, दूजा कहाँ समाई।।[4]

कबीर की इरा प्रेमनहित में निरंतरता पाई आत्मसमर्पण और निरहंकारा का अखंड साम्राज्य है। विरहवेदना की तीव्रता, विह्वलता की अतिशयता, अपने प्रिय ब्रह्म के लिए

आइ सकौं नहीं तोहिं पै सकौं न तुज्झ बुलाइ |

जियरा यों ही लेहुगे बिरह तपाइ तपाइ।।[5]

प्रिय ब्रह्म के विरह में जीवन धारण करना भी अत्यंत दुष्कर है - कबीर सुंदरि यौं कहै, सुणि हो कंत सुजाण। देगि मिली तुम आइ करि नहिंतर तर्जी पराण॥

निष्कर्ष :-

कबीर के अनुसार अन्योन्याश्रय भाव से परमात्मा विश्व में और विश्व परमात्मा में उपस्थित है। इसी कारण से वे मन्दिर और मूर्ति में उसे सीमित करना पसंद नहीं करते। उनके मत में परमात्मा का वर्णन किसी सीमित रूप-रेखा में असंभव है। उनका

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 14 Issue 07 July- 2024
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

अंतिम निर्णय यही रहा कि "केवल वही है, और कोई नहीं है"। उनके निर्गुण का विधान और सगुण का निषेध इसी तात्पर्य से प्रेरित है।

सदर्भ-सूची :-

1. कबीरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पांचवा संस्करण 2004.
2. कबीर वांङमय, हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, प्रा०ली० नेता सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, संस्करण 1998.
3. उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, परशुराम चतुर्वेदी, भारती भण्डार, इलाहाबाद, 2008
4. कबीर हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकार कार्यालय, बम्बई, 1964 ई.
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास नवीन, डॉ. लालसाहब सिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण 1998.